जपु जी साहिब एवं श्रीमद्भगवदगीता

डॉ. दीप शिखा
जगत गुरू नानक देव पंजाब स्टेट
ओपन विश्वविद्यालय, पटियाला

अमूरत

यह शाश्वत सत्य है कि प्राणी अपने शुभ कर्मों के परिणाम स्वरूप दुर्लभ एवं सर्वोत्कृष्ट मानव जीवन प्राप्त करता है, और सुख–दुःख भोगते हुए जीवन यात्रा सम्पूर्ण कर अपने किए कर्मों के अनुसार प्रारब्ध अर्थात् सुख–दुःख के भोग हेतु धरा पर विभिन्न योनियों में जन्म ग्रहण करता है। आवागमन के इस बन्धन से मुक्ति का एकमात्र उपाय ईश्वर के प्रति समर्पित भाव, सतत उस सत्य स्वरूप परमेश्वर की स्तुति, नाम–सिमरन करना, उसका गुणगान करना तथा उसकी शरण में रहना है। परमेश्वर का साक्षात्कार, उससे एकाकार होना, जीवन के ग्राह्य एवं त्याज्य पक्षों का वर्णन, जीवन का सत्य क्या है आदि जीवन–दर्शन के मूल स्रोत एवं प्रमाणिक सिद्धान्तों का आधार धर्मग्रन्थ एवं धर्मशास्त्र है। शास्त्रों एवं ग्रन्थों वर्णित आर्ष वाक्य, सिद्धान्त एवं उपदेश मानव को अपने दुर्लभ जीवन को सफल बनाने हेतु सदैव धर्म धारण करने का संदेश देते हैं, क्योंकि ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों के कारण मानव एवं धर्मग्रन्थों में वर्णित सिद्धान्तों के अनुरूप अर्थात् धर्म, कर्म, ज्ञान, सरम के पथ का अनुगमन करते हुए कर्म करने वाला मानव ही गुरमुख/भक्त की पदवी को प्राप्त कर परमेश्वर के दरबार सच्चखण्ड/परमधाम में प्रवेश करके उसका ही स्वरूप होकर जीवन के अंतिम गंतव्य मोक्ष को प्राप्त करता है।

कुंजी शब्द

ऊँकार का स्वरूप, ईश्वर को समर्पित कर्म, नाम–सिमरन, धर्म कर्म ज्ञान, सरम और सच्च खंड, मानवीय कर्त्तव्य, मानवीय धर्म।

सृष्टि का मूल, उसका अस्तित्व धरा पर जीवों प्राणियों की उत्पत्ति है। जिनमें विवेक एवं बुद्धि के धारक मानवीय जीवन को सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। इस विलक्षणता के कारण मानव अक्षुण्ण सुख, ब्रह्म–साक्षात्कार भाव अविनाशी परमात्मा को प्राप्त कर सकता है। अतः उसका उद्देश्य केवल भोग प्राप्ति नहीं होना चाहिए, क्योंकि भोग प्राप्ति तो प्रत्येक योनि में प्रारब्धानुसार मानव भोगता ही है, मानव का एक मात्र उद्देश्य भगवत्प्राप्ति होना चाहिए। भगवत्प्राप्ति की साधना ही अन्य सभी सद्गुणों की प्राप्ति एवं धर्म का पालन है एवं परम सिद्धि है, जिसे धार्मिक परम्परा में मोक्ष, निर्वाण, कैवल्य एवं

आत्मसाक्षात्कार कहा गया है। भारतीय धार्मिक परम्परा एवं संस्कृति प्रारम्भ से ही मानव जीवन की पथ प्रदर्शक रही है। धर्म को मानवीय जीवन का मूलाधार एवं ऐसी दृढ़ नींव कहा गया है, जिस पर मानवीय जीवन का आध्यात्मिक एवं भौतिक विकास और उन्नति निर्भर है। धर्म अर्थात् ***धारणाद् धर्ममित्याहु धर्मः*** जो धारण किया जाता है, वह धर्म है, धारण का अर्थ है अपने व्यक्तित्व में सात्विक गुणों का विकास, जीवन मूल्यों की व्यावहारिकता का बोध अर्थात् सदाचार एवं कर्त्तव्य पालन की निष्ठा, जिनकी प्राप्ति का मूलाधार ईश्वर के प्रति समर्पित भाव है। धर्म ईश्वरीय समर्पण के साथ–साथ मानव को जीवन मूल्यों का पालन, निष्काम कर्म एवं कर्त्तव्य पालन करते हुए जीना सिखाता है। भारतीय परम्परा में धर्म प्रवाह का प्रमुख आधार धर्म ग्रन्थ हैं। आदि सृष्टि के प्रारम्भ से ही परमेश्वर ने इसके कल्याण हेतु समय–समय पर अनेक संत–महात्मा, ज्ञानी–विज्ञानी, गुरू, आचार्य, उपदेशक, पीर–पैगम्बरों को धरा पर भेजा और स्वयं भी अवतार ग्रहण किया। मानवीय सुख–समृद्धि, शान्ति एवं सामाजिक सुव्यवस्था बनाए रखने हेतु युग–युगों से महापुरुषों की बाणी, आर्ष वाक्य, उपेदश, सिद्धान्त सदैव प्रासंगिक रहे हैं। इन उपदेशों के अनुसार जीवनयापन करने में ही मानव शरीर की चरितार्थता है। गीता में वर्णित है कि जो जन ईश्वरीय उपदेशों, आदेशों, सिद्धान्तों की उपेक्षा करते हैं, इनका पालन नहीं करते, वह समस्त प्रकार के ज्ञान से वंचित रहते हैं, उनके जीवन में सार्थकता का अभाव ही रहता है, उनके सभी सिद्धि प्रयास नष्ट हो जाते हैं–**ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतम्। सर्वज्ञानविमूमढांस्तान्विद्धि नष्टानचेतसः।**किन्तु यदि जीव अकाल पुरख के आदेश को, उपदेश को प्रसन्नचित्त होकर सुनता है, पालन करता है, जान लेता है तो प्राणी कोई भी अहंकारमयी 'मै' के वश में नहीं होता–**नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ।।**स्पष्ट है कि प्राचीन धर्मग्रन्थों एवं शास्त्रों में जीवन की व्यक्तिगत साधना, आचरण के साथ–साथ समाज हेतु धारण करने वाले नीति, नियमों को समान महत्त्व दिया गया है। न्याय भाष्य में धर्मशास्त्रों के अस्तित्व को अनिवार्य मानते हुए कहा गया है कि ''यदि धर्मशास्त्रों की अप्रमाणता अर्थात् अभाव से तो पृथ्वी पर से समस्त लोक मर्यादा का लोप हो जाने से लोक–नाश का प्रसंग उपस्थित हो जाता है।''[1] यह वक्तव्य सिद्ध करता है कि व्यक्ति के सदाचार पर ही एक स्वस्थ राष्ट्र, समाज का निर्माण निर्भर है तो सामाजिक व्यवस्था में नैतिकता का प्रवाह ही मानव एवं राष्ट्र के सर्वांगीण विकास का आधार है, जिसका स्रोत धर्मग्रन्थों एवं शास्त्रों में वर्णित सत्पुरुषों की बाणी एवं सिद्धान्त हैं, जो इस बात का प्रमाण है कि सत्पुरुषों के जीवन का लक्ष्य सृष्टि का कल्याण है। सर्वविदित है कि महापुरुष सत्य–संकल्प होते हें। वे जो भी संकल्प करते हैं, वे सफल हो जाते हैं, या उन्हें इनके सफल होने पर आत्मविश्वास होता है। भक्त और आस्तिक इसे परमात्मा की देन–**''सत्य–संकल्पाचा दाता भगवान्। सर्व मनोरथ करी पूर्ण**'' समझते

हैं। बुद्धिजीवियों का इस सम्बन्धी मत है कि सत्य–संकल्प सदैव दूसरों के लिए, समाज एवं समष्टिपरक होते हैं। अतः उनकी तरंगें अर्थात् संकल्प सम्पूर्ण समाज में अनुकूल प्रति–तरंगे प्रवाहित करती हैं। जिससे समाज एवं मानव को बल प्राप्त होता है और अनुकूलताएँ दिन–प्रतिदिन बढ़ती और प्रतिकूलताएँ घटती रहती हैं।''[2] बुद्धिजीवियों ने इस अनुकूलता का अधिष्ठाता ईश्वर को माना है। जो यह संदेश देता है कि परमात्मा के सान्निध्य में रहकर, उसका आश्रय ग्रहण कर, उसके प्रति समर्पित भाव से कर्म करने से श्रेय–प्रेय की सिद्धि सहज ही हो जाती है।

सिक्ख धर्म के धर्म ग्रन्थ **'श्री गुरू ग्रन्थ साहिब'** में श्री गुरू नानक देव जी की बाणी 'जपुजी साहिब' का मूल मन्त्र ही ईश्वरीय स्वरूप का दर्शन है। नानक जी ने ईश्वर को करता करतार कहते हुए निरन्तर इसके जाप का उपदेश दिया है इस धरा पर मानव उस सत्य स्वरूप, निरर्वेर, परमेश्वर का सिमरन करते हुए आध्यात्मिक ज्ञान, आन्तरिक शान्ति अनुभव करता हुआ मोक्ष को प्राप्त करता है–**ੴ सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि।**

यजुर्वेद में **ओइम् क्रतो स्मर**[3]कहा गया है, वह ऊँकार ही सत्य है **सतिनामु–**उसका सदैव सिमरन कर**,** वह अविनाशी है, सर्वव्यापक है, सदैव उसकी उपासना कर–**ओइम् खं ब्रह्म।**[4] ओउम का स्मरण, उच्चारण एवं ध्यान लगाने से आत्मा का परमेश्वर से, परम ब्रह्म से सम्बन्ध स्थापित हो जाता है।

श्रीमद्भगवदगीता में श्री कृष्ण अर्जुन को कहते हैं **प्रणवः सर्ववेदेषु (श्रीमद्भगवदगीता)** वह प्रणव, ओंकार मैं ही हूँ जो मानव एक अक्षर ऊँ का उच्चारण करता है, **ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म** का नाम जपता है, वह आवागमन से मुक्त होकर परमगति को प्राप्त करता है–**स याति परमां गतिम्।**सृष्टि में ऊँकार ही सर्वोपरि है। वह वह काल से परे है, अविनाशी है, वह सदैव अस्तित्वान है। परमेश्वर किसी भी प्रकार की योनि में जन्म नहीं लेता, क्योंकि वह आवागमन के चक्र से मुक्त है–**अकाल मूरतिअजूनी** निराकार एवं साकार रूप परमात्मा सभी कालों से परे है, वही शाश्वत काल है, अजन्मा और अविनाशी है–**अहमेवाक्षय कालो, अजः अपि सन्नव्ययात्मा**वह अनादि परमेश्वर स्वयं प्रकाशमान है–**सैभं।** और प्रकाशित वस्तुओं का भी प्रकाश है, अन्धकार से परे है–**अनादिमत्परं।। ज्योतिषामपि तज्जयोतिस्तमसः।**

सत्य रूपी ऊँकार का जाप करने से अर्थात् **यज्ञानां जप यज्ञोऽस्मि,** मानव प्रारब्ध से भी मुक्त हो जाता है। आप्टे कोश अनुसार यज्ञः का एक अर्थ कोई भी पवित्र या भक्ति सम्बन्धी क्रिया[5] और कीर्तनम्[6] के अर्थ से ज्ञात होता है कि नाम सिमरन, नाम जपने का अर्थ कीर्तन रूप में परमेश्वर की

स्तुति उसका गुणगान करना है। गीता में कहा गया है कि जो नित्य कीर्तन करते हुए प्रभु महिमा का गुणगान करते हुए उसके समक्ष सदैव नतमस्तक रहते हैं–**सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढ़व्रताः।। नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्युयुक्ता उपासते।।**अनन्य भाव से मेरा स्मरण करने वाले ऐसे भक्त के लिए मैं (साकार एवं निर्गुण रूप परमेश्वर) प्रतिक्षण सुलभ रहता हूँ –**अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः तस्याहं सुलभः पार्थ।**अर्थात् ऐसा भक्त/गुरमुख मानव सरलता से परमेश्वर का सान्निध्य प्राप्त कर लेता है, क्योंकि वह नित्य उस प्रभु की भक्ति में एकनिष्ठ भाव से प्रवृत्त रहता है। गुरू नानक देव जी कहते हैं परमपिता परमेश्वर से सम्बन्ध, उससे मिलाप गुरू की कृपा से ही प्राप्त होता है –**गुर प्रसादि।** गुरू के मुख से निसृत ज्ञान ही वेदों का ज्ञान है, गुरू ही परम शक्ति है, गुरू ही ब्रह्मा है–**गुरमुखि वेदं गुरमुखि रहिआ समाई ...गुरू ईसरु गुरू गोरखु बरमा ...।।**अतः हे मानव तू सदैव गुरू के समीप रहकर उससे ज्ञान प्राप्त कर, उसका उपदेश रूपी ज्ञान सर्वत्र विद्यमान है, गुरू ही सब कुछ समझाने वाला है–**गुरा इक देहि बुझाई।।**

श्री कृष्ण के उपदेश का सुनकर, जीवन के यथार्थ का बोध होने पर मोह मुक्त हुआ अर्जुन कहता है– भगवन आप सबके गुरू है, हे जगत् निवास परम स्रोत, अक्षर, कारणों से कारण, इस भौतिक जगत से परे हैं, आप ही मेरे परम पूज्य महान आध्यात्मिक गुरू है–**त्वमस्य पूज्यश्च गुरूर्गरीयान्** मैं आपको पुनः पुनः नमस्कार करता हूँ–**कस्मात् च ते न नमेरन्महात्मन्, सर्वे नमस्यन्ति।**आपकी कृपा से ही सभी भौतिक दुःखों का नाश सम्भव है–**प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते।।**और मानव परम शान्ति तथा परम नित्य धाम को प्राप्त कर लेता है –**तत् प्रसादात् परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्।।** अर्जुन की यह स्तुति मानव को सत्य का दर्शन करने वाले, गुरू के समीप रहकर, उसके पास जाकर सत्य जानने के लिए, ज्ञान प्राप्ति हेतु प्रेरित करती है।

कहा गया है कि मानव का सच्चा अध्ययन मानव स्वयं ही है,[7] किन्तु यह अध्ययन उत्तम बुद्धि उच्च, मति वाला मानव ही कर सकता है। वेदों में दुबुर्द्धि के नाश हेतु प्रार्थना करते हुए कहा गया है– ''**दुर्मतययः मा''** अर्थात् दुष्ट बुद्धि/विचार न रहे, कभी पैदा न हो, इनसे हम दूर रहे । **सुमतौ शर्मन् स्याम**–सुमति अर्थात् सुबुद्धि से सुखपूर्वक हम युक्त रहें, ऐसी सुमति का हम निरन्तर सेवन करे–**सुमतिं भजामहे।**[8] भगवान कृष्ण कहते हैं कि वह बुद्धि सात्विक है, जिसके द्वारा मानव को करणीय और अकरणीय कर्मो का बोध होता है।बोधव्य है कि जीवन के सर्वांगीण पक्षों का अध्ययन धर्म को धारण किए बगैर अर्थात् धार्मिक ग्रन्थों के अध्ययन के बिना असम्भव है, धर्म ग्रन्थ जीवन में दिव्यत्व की प्राप्ति एवं संसिद्धि तथा आत्मिक आनन्द के लिए ईश्वर की आराधना एवं उसकी शरण

ग्रहण करने का संदेश है, यही जीवन की सर्वोच्च सिद्धि है। उसकी रज़ा में सन्तुष्ट रहना, उसके हुक्म अनुसार चलने वाला प्राणी ही जगत् में रहते हुए भी इसके भोगों से निर्लिप्त रहता है, वही सच्चा गुरमुख है–**हुकमि रजाई चलणा, नानक लिखिआ नालि।**

श्री कृष्ण कहते हैं कि जो मानव कृष्णभावनामृत (ईश्वर की आज्ञानुसार) से कर्म करता है, अपने सभी कार्यों के लिए उसी ..पर आश्रित होता है, केवल वही संन्यासी और योगी है–**चेतसा सर्वकर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः**परमेश्वर के निर्देशानुसार कर्म करने वाले मानव को हानि–लाभ की चिन्ता नहीं रहती, सुख–दुःख उसे प्रभावित नहीं करते, प्रत्येक अनुकल और प्रतिकूल परिस्थिति में वह स्थिर ही रहता है। इस संसार में वह जो भी सुख–दुःख भोगता है, उसे ईश्वरीय रज़ा मानकर प्रसन्न रहता है–**हुकमि लिखि दुख सुख पाईअहि।।** भगवान कृष्ण कहते हैं कि मानवीय देह में एक दिव्य भोक्ता है, जो ईश्वर है और साक्षी और अनुमति देने वाले के रूप में विद्यमान है–**उपद्रश्टानुमन्ता च भर्ता ...।** ईश्वर के निर्देशानुसार कर्म करने वाला मानव जीवन के सभी अवरोधों को पार कर लेता है–**मच्चितः सर्वदुर्गाणि मत्प्रासादत्तरिष्यसि।।** ईश्वर के हुक्म की पालना, उसकी रज़ा में रहना ही सभी सुखों की प्राप्ति का मार्ग है। जो मानव ईश्वर के हुक्म को नहीं मानता, वह अपने पथ से भटक जाता है।

मोक्ष दायक उस सत्य स्वरूप परमेश्वर का निरन्तर श्रवण, मनन एवं चिन्तन करने से सिद्ध, पीर, देव आदि जैसे परम पद की प्राप्ति होती है। नाम–श्रवण से अठसन तीर्थों के स्नान का फल प्राप्त होता है और अज्ञानी मनुष्य भी नाम–श्रवण से भक्ति मार्ग को प्राप्त कर सकते हैं। इस भव सागर के अथाह का ज्ञान भी नाम–श्रवण से सम्भव है, जिसे जानकर मानव आवागमन से मुक्त हो जाता है–**सुणिअै सिध पीर सुरि नाथ।। .... सुणिअै सतु संतोख गिआनु।। सुणिअै अठसठि का इसनानु।। ...सुणिअै अंधे पावहि राहु।। सुणिअै हाथ होवै असगाहु।। नानक भगता सदा विगासु।। सुणिअै दूख पाप का नासु।।**

कहा गया है कि जो प्राणी अपने अन्तर्यामी सर्वात्मा परमेश्वर की भक्ति, उसका गुणगाण करने, प्रभु नाम के श्रवण में दृढ़ विश्वासी है, सदैव उसकी शरण में रहता है, उसके आदेश, विधान जो सुख–दुःख रूप में उसे प्राप्त होते हैं, में सन्तुष्ट रहता है। प्रत्येक परिस्थिति में सदैव उसका स्मरण करता है, उसकी ध्रुवा मधुर स्मृति बनाये रखता है और विश्व के अभ्युदय एवं निःश्रेयस के लिए हृदय के सद्भावों के साथ सर्वसमर्थ प्रीाु से प्रार्थना करता रहता है, उसकी आराधना करता है। ऐसा मानव स्वयं देवत्व अर्थात् परमेश्वर का ही स्वरूप हो जाता है।[9]

सिद्ध है कि ईश्वर के नाम–श्रवण में भी ऐसी दिव्य शक्ति है कि जो प्राणी ईश्वर में विश्वास नहीं रखते, भक्ति नहीं करते, आराधना नहीं करते, न ही उन्हें कोई आध्यात्मिक ज्ञान होता है, तो भी श्रद्धापूर्वक या अनजाने में ही प्रभु का नाम, उसका गुणगान सुनने से ऐसे प्राणी परम सन्तोष एवं आनन्द को अनुभव करते हुए –**कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च।।** सभी पापों से मुक्त हुए शुभ लोक अर्थात् जहां पुण्यात्माएँ निवास करती है, उन्हें प्राप्त करते हैं–

अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते।।

तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः।।

श्रद्धावाननसूयश्च शृणुयादपि यो नरः।

सोऽपि मुक्तः शुभाँल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम्।।

इतना ही नहीं जो दूसरों को यह रहस्य अर्थात् ईश्वरीय महिमा सुनाते हैं, वह भी निश्चित ही परमेश्वर, परम सत्ता को प्राप्त करते है। गुरू पातशाह कहते हैं कि उस अकाल पुरख के नाम–श्रवण के पश्चात् जो मानव उसे हृदय में धारण करता है, उसका मनन, उसका ध्यान करता है, उसकी अवस्था का वर्णन असम्भव है। प्रभु नाम का चिन्तन एवं मनन करने वाला मानव संसार में शोभा का पात्र होता है, उसके जीवन मार्ग में किसी भी प्रकार की बाधा उत्पन्न नहीं होती। वह समस्त सृष्टि का ज्ञाता होकर देवगणों के साथ स्वर्गलोक को प्राप्त करता है–**मंने की गति कही न जाई।। ...मंनै सगल भवण की सुधि।। ...मंनै मारगि ठाक न पाई।। पंनै पित सिउ परगटु जाइ।।**

परमेश्वर के ध्यान, चिन्तन, मनन से मानव आत्मिक शक्ति तो प्राप्त करता ही है साथ ही साथ भगवन स्वयं ही उसकी सभी इच्छाओं की पूर्ति करता है, उसे किसी से कुछ मांगने की आवश्यकता नहीं रहती–**मंनै नानक भवहि न भिख।। ऐसा नाम निरंजनु होइ।।** गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि जो अनन्य भाव से मेरा चिन्तन करते हुए मेरे प्रति समर्पित रहता है, मैं स्वयं उनकी सभी जरूरतों को पूरा करता हूँ।

सर्वविदित है कि यह संसार जहां मानव का जन्म हुआ है, अस्थायी है, नश्वर है, इस संसार की प्रत्येक वस्तु भी नश्वर है, मानव भ्रमवश इसे स्थायी मानकर, कामनाओं के वश में हुआ निरन्तर दुःखों को भोग रहा है। गुरू पातशाह कहते हैं कि इस संसार में यदि कुछ सत्य है, स्थायी है तो वह परमेश्वर है, सृष्टि रचयिता वह परमेश्वर सभी जीवों का आदि है, सर्वव्यापी है, युग–युगों से सत्य

है,–**आदि सचु जुगादि सचु है भी सचु नानक होसी भी सचु।।** सभी प्राणियों की उत्पत्ति सत्य स्वरूप परमेश्वर से हुई है– सत्यं ब्रह्म, वही प्राणियों का उद्गम है, **यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।।** जब मानव को यह बोध हो जाता है तब वह परमेश्वर को प्रतिक्षण उसे अपने अन्तः में अनुभव करता हुआ उसके हुक्म अनुसार जीवनयापन करता है। यही मानव और उसके जीवन का परम धर्म है। यही धर्म का सिद्धान्त है–**धर्म खंड का एहो धरमु।।** प्राणियों के लिएस्रष्टा प्रभु ने पृथ्वी रूपी धर्मशाला स्थापित की हुई है, जिसे कर्मभूमि कहते हैं–**तिसु विचि धरती थापि रखी धरम साल।।**इस धर्मशाला में अनेक रात्रियां, ऋतुएं, तिथियाँ, सप्ताह, वायु, जल, अग्नि आदि भी अपना–अपना धर्म निभाते हुए अस्तित्व में है, इसमें अनेक प्रकार के प्राणी है, जिनकी विभिन्न प्रकार की धर्म–कर्म की, उपासना की युक्ति है, विधि है और श्वेत–श्याम आदि अनेक वर्ण है, अनेक नाम है। जगत् में विचरण कर रहे इन प्राणियों के शुभ–अशुभ कर्मों के अनुसार फल देने वाला परमेश्वर और उसका दरबार सत्य है–**तिसु विचि जीअ जुगति के रंग। तिन के नाम अनेक अनंत।। करमी करमी होइ वीचारु।। सचा आपि सचा दरबारु।।**

स्पष्ट है कि धरा जिसे धर्मशास्त्रों और ग्रन्थों में कर्मभूमि कहा गया है, गुरू नानक देव जी ने उसे धर्मशाला कहते हुए सभी वर्णों को संदेश दिया है, किस वर्ण में जन्म लिया है, यह महत्त्वपूर्ण नहीं है, महत्त्वपूर्ण तुम्हारे कर्म है, कर्म ऐसे करों, जिसमें धर्म बसा हो, अर्थात् प्रत्येक कर्म सृष्टि के कल्याण एवं मानव जाति के हित में होना चाहिए। तुम्हारा प्रत्येक कर्म **'किरत करो, वंड छको, नाम जपो'** भावना से पूरित होना चाहिए। तभी मानव रूप में तुम्हारा जन्म ग्रहण करना सार्थक एवं सफल है और यही मानव धर्म है, इसी में मानवता निहित है।

गीता में भगवान कृष्ण ने चार वर्णों की बात करते हुए यही संदेश दिया कि वर्ण जाति व्यवस्था से ऊपर उठकर सदैव ईश्वर और उसकी रचित सृष्टि के कल्याण के प्रति तुम्हारा प्रत्येक कर्म होना चाहिए–**स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः।।**यही धर्म का सिद्धान्त है–**धर्म्यं प्रत्यक्षावगमं।।** इस धर्म का भावकृष्णभावनामृत कर्म करने वाले मानव सृष्टि के कल्याण हेतु सत्य और प्रिय वाणी से कर्म करते सुख को प्राप्त करते हैं–**अक्रन कर्म कर्मकृतः सह वाचा मयोभुवा। देवेभ्यः कर्म कृत्वास्तं प्रेत सचाभुवः।।**[10]जितनी भी सृष्टियाँ है, सभी का आदि, मध्य और अन्त परमेश्वर है।

ज्ञातव्य है कि धर्मग्रन्थों के सिद्धान्तों एवं महापुरुषों के उपदेशों ने प्रारम्भ से ही मनुष्य एवं संसार को वो दिशा, वो मार्ग दिया है, जो मानव में 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' की भावना का जागरण है, इस भावना द्वारा ही मानव समष्टि एवं व्यष्टि के यथार्थ स्वरूप को समझ कर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के

तत्त्व को व्यावहारिक रूप देने में समर्थ होता है। धर्म के पथिक को ज्ञान हो जाता है कि वह परमेश्वर का ही अंश है। उसकी सेवा और उसके प्रति समर्पण ही उसका अस्तित्व है। यही धर्म एवं धर्म खण्ड का सार है। गुरू नानक देव जी कहते हैं कि इस धर्म खण्ड में अपने कर्त्तव्यों को सिद्ध करता हुआ मानव ही ज्ञान –खण्ड में प्रवेश करता है। जहां पहुंच कर साधक को अनेक ही ब्रह्म, रूद्र, पवन, जल, अग्नि, अनेक ही, सूर्य और चन्द्रमा, कर्मभूमियों, मण्डलों, राजाओं, अनेकों सिद्धों और नाथों, अनेकों, देवों और दानवों अनेकों वेदों, श्रुतियों आदि की उत्पत्ति और अन्त का बोध होता है–**गिआन खंड का आखहु करमु। केते पवण पाणी वैसंतर केते कान महेस... केते सिध बुध नाथ केते केते देवी वेस। केते देव दानव मुनि केते केते रतन समुंद। केतीआ खाणी केतीआ बाणी केते पात नरिंद।। केतीआ सुरती सेवक केते नानक अंतु न अंतु।। गिआन खंड महि गिआनु परचंडु।। तिथै नाद बिनोद कोड अनंदु।।**ज्ञान खण्ड में प्रवेश करते ही प्राणी ज्ञानवान् हो जाता है। उसके इस सृष्टि और अपने अस्तित्व सम्बन्धी सभी भ्रम दूर हो जाते हैं। ज्ञान खण्ड का ज्ञान दिव्य ज्ञान है इसमें कौतुक और आनन्द मौजूद है, जिसे साधक प्राप्त करता है।

श्री कृष्ण कहते हैं कि इस दिव्य ज्ञान के समान कुछ भी पवित्र नहीं है सभी कर्मो का अवसान इसी ज्ञान में होता है–**न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।।** यह ज्ञान केवल बौद्धिक स्तर तक ही सीमित नहीं होता अपितु इस को प्राप्त करने वाला अर्थात् ज्ञान–खण्ड में प्रवेश करने वाला भक्त/गुरमुख जीवन दर्शन का ज्ञान प्राप्त कर लेता है। जब साधक अविद्या के नाशक ज्ञान से प्रबुद्ध होता है तब प्राप्य ज्ञान से सब कुछ उसी तरह प्रकट हो उठता है जैसे सूर्य उदित होते ही समस्त सृष्टि, सभी वस्तुए प्रकाशित हो उठती है–**ज्ञानने तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मानः।। तेशामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम्।।**

ज्ञातव्य है कि ज्ञान रूपी प्रकाश के उदित होते ही मानव ब्रह्माण्ड और निज अस्तित्व का ज्ञाता हो जाता है और इस ज्ञान को आधार बनाकर वह सरम खंड, उस क्षेत्र में प्रवेश करता है जहां अद्वितीय सुन्दरता, स्वरूप की सृजना होती है अर्थात् एक सद्गुणी चरित्र का निर्माण होता है। यहां साधक अपने कर्मो द्वारा आध्यात्मिक स्तर प्राप्त करने का प्रयास करता है। नानक पातशाह कहते हैं इस खण्ड में उस बुद्धि, सूझ, मति, मन की स्थिरता और उस सुरति का निर्माण किया जाता है, जिसके द्वारा परम सिद्ध अवस्था प्राप्त की जा सकती है–**सरम खंड की बाणी रूपु।। तिथै घाड़ति घड़ीअै बहुतु अनूपु।। ता कीआ गला कथीआ ना जाहि।। जे को कहै पिछे पछुताई।। तिथै घड़ीअै सुरति मति मनि बुधि। तिर्थ घड़ीअै सुरा सिधा की सुधि।।**

बोधव्य है कि सरम खण्ड में अपने स्वरूप का बोध करवाने वाली सात्विक बुद्धि अर्थात् सिद्ध अवस्था (कर्मफल से मुक्ति) रूपी बुद्धि गढ़ी जाती है जिसका निर्माण होने पर मानव परमेश्वर में ही निवास करता है भाव परमेश्वर में बुद्धि, मन को स्थित करने पर भक्त उसे सहज ही प्राप्त कर लेता है, इसमें कोई संदेह नहीं है–**मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशयः। निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः।।**इस सात्विक बुद्धि द्वारा ही मानव करणीय एवं अकरणीय कर्मों का ज्ञान प्राप्त करता है और वह अग्रिम करम खण्ड में प्रवेश कर पाता है। यही आत्मसाक्षात्कार की विधि है, उसका द्वार है। नानक पातशाह का कथन है प्रभु की कृपा को प्राप्त करने वाले उपासक भाव धर्म, ज्ञान और सरम खंड को सिद्ध करने वाले साधक ही इस खण्ड प्रवेश करते हैं। जहां ये उपासक होते हैं वहा अन्य और कोई नहीं होता। ऐसे साधक का अपनी देह (इच्छानुसार देह त्याग का सामर्थ्य, शक्ति) पर, इन्द्रियों पर और मन पर नियंत्रण होता है। ये साधक अपने शुभ कर्मों के कारण जन्म–मरण के बन्धन से मुक्त होता है। ऐसे साधकों का निर्गुण स्वरूप राम के साथ अद्वैतभाव स्थापित हो जाता है। इस स्वरूप को प्राप्त करने वालों के गुणों का कथन असम्भव है। ये न तो मृत्यु को प्राप्त होते हैं, न ही ठगे जा सकते हैं। परमेश्वर स्वयं इनके भीतर निवास करता है। ऐसे भक्त सदैव आनन्द में रहते है और परमेश्वर का ही अंश होकर निवास करते हैं–**करम खंड की बाणी जोरु।। तिथै होरु न कोई होरु।। तिथै जोध महाबल सूर।। तिन महि रामु रहिआ भरपूर।। तिथै सीतो सीता महिमा माहि।। ता के रूप न कथने जाहि।। ना आहि मरहि न ठागे जाहि। जिन के रामु वसै मन माहि।। तिथै भगत वसहि के लोअ।। करहि अनंदु सचा मनि सोइ।।**

करम खण्ड में प्रवेश करने वाला भक्त शरीर त्याग से पूर्व ही अपनी इन्द्रियों को वश में करने, इच्छाओं एवं क्रोध के वेग को रोकने में समर्थ और बुद्धि से शुद्ध होकर धैर्य पूर्वक मन को वश में करते हुए, इन्द्रियतृप्ति के विषयों का त्याग–**बुद्धया विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च** करता हुआ प्रत्येक सांसारिक सुख को प्राप्त करता है–**शक्नोतीहैव यहः सोढुं प्राक्शरीरविमोक्षणात्। कामक्रोधाद्धवं वेगं स युक्तः स सुखी नरः।।**इस प्रकार कर्मखण्ड में पहुंचा हुआ मानव अर्थात् दिव्य पद पर स्थित परम ब्रह्म को अनुभव करता हुआ आत्मिक प्रसन्नता को प्राप्त कर ईश्वर की शुद्ध भक्ति को प्राप्त करता है–**ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा... मद्भक्तिं लभते पराम्।।**

करम खण्ड में पहुंचे भक्त को गुरू की कृपा से मोक्ष का अधिकारी हो जाता है वह जान जाता है कि सत्य स्वरूप निरंकार ही सर्वस्व है उसका ध्यान उस निरंकार में ही दृढ़ रहता है–**पंचा का गुरु एकु धिआनु।। ...तू सदा सलामति निरंकार।।**नाम–सिमरन करते हुए निर्गुण स्वरूप परमेश्वर का अंश बनने वाला मानव ही परमधाम अर्थात् सच्च खण्ड में प्रवेश करता है–**भक्त्या मामभिजानाति**

यावान्यश्चास्मि तत्त्पतः। ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम्।।

जो पूर्व चार खण्डों की यात्रा सम्पूर्ण कर चुका है, वही मानव सच्च खण्ड भाव ईश्वर के परमधाम में प्रवेश कर पाता है। सच्च खण्ड/भगवद्धाम में स्वयं प्रकाशित सत्य स्वरूप परमेश्वर निवास करता है। यह खण्ड परमेश्वर का वो दिव्य दरबार है जहां सद्गुण मानव के साथ सगुण रूप परमात्मा स्वयं निवास करते हैं। सच्च खण्ड में अनन्त खण्ड, मंडल ओर ब्रह्माण्ड हैं। परमेश्वर अपनी रचित सृष्टि पर कृपा करता हुआ उनका पालन पोषण स्वयं ही करता है। यहीं से उसकी आज्ञा ब्रह्माण्ड में जाती है और वह अपने हुक्मानुसार सृष्टि को चलाता है। यहीं सभी प्राणी उसके आदेशानुसार कर्म करते हुए सदैव प्रसन्न रहते हैं–**संच खंडि वसै निरंकारु।। करि करि वेखै नदरि निहाल।। तिथै खंड मंडल वरभंड।। जे को कथै ते अंत न अंत।। तिथै लोअ लोअ आकार।। जिव जिव हुकमु तिवै तिवै कार।। वेखै विगसै करि वीचारु।। नानक कथना करड़ा सारु।।**

मानवीय जीवन की आध्यात्मिक यात्रा के इस अंतिम पड़ाव में प्रवेश करने वाला मानव जीवन के अंतिम लक्ष्य (आत्मा और परमात्मा का मिलन) को प्राप्त कर लेता है। स्पष्ट है कि जो भक्त अपनी जीवन यात्रा परमेश्वर के निर्देशानुसार करता है अर्थात् धर्म खण्ड से प्रारम्भ कर सच्च खण्ड में प्रवेश करता है, वही परमेश्वर के परमधाम को प्राप्त करता है–**मद्भक्ता यान्ति मामपि।।**

नानक कहते हैं कि उस अकाल पुरख का कथन करना अत्यन्त कठिन है। अतः मानव को अपने नित्य कर्म ऐसे बनाने चाहिए कि वह परमेश्वर का नाम–सिमरन करे, उसका निरन्तर ध्यान, मनन एवं चिन्तन करे। प्रभु–नाम का चिन्तन करने वाले श्रेष्ठ संतजन निरंकार के दरबार में प्रमुख होते हैं। ऐसे प्रभु प्रिय गुरमुख ही अकाल पुरख की सभा में सम्मान प्राप्त करते हैं–**पंच परवाण पंच परधानु।। पंचे पावहि दरगहि मानु।।** ईश्वर का आश्रय लेने वाला उसके समक्ष नतमस्तक होने वाला भक्त ही प्रभु को प्रिय होता है, प्रभु उसे सच्च खण्ड भाव अपने परम धाम में अवश्य बुलाते हैं–**मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु। मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे।।** और अनंत खण्ड और ब्रह्माण्डों से युक्त परमात्मा को कृष्णभावनामृत कर्म करने वाला भक्त/गुरमुख सरलता से प्राप्त कर लेते हैं। भगवान कृष्ण कहते हैं कि जीवात्मा का परमेश्वर से मिलन, अद्वैतभाव की सिद्धि ही ब्राह्मी (आध्यात्मिक) स्थिति है, ईश्वरीय जीवन का पथ है, जिसे प्राप्त कर मानव/गुरमुख कभी भी मोहित नहीं होता। इस स्थिति में स्थित मानव जीवन के अंतिम क्षणों में भी भगवद्धाम/सच्च खण्ड में प्रवेश कर सकता है–

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति। स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति।।

निष्कर्ष रूप में जपुजी साहिब और श्रीमद्भगवदगीता में वर्णित उपदेश मानव को प्रभु का

आश्रय ग्रहण कर, उसका नाम–सिमरन करते हुए, उसके प्रति समर्पित होकर जीवन जीने का संदेश देते हैं। जपुजी में धर्म खण्ड से लेकर सच्च खण्ड में प्रवेश करने की यात्रा जीवात्मा का परमात्मा से मिलन तक की यात्रा है। नानक कहते हैं कि इस सच्ची (पांच खण्ड) टकसाल में शब्द गढ़ा जाता है अर्थात् नाम–सिमरन द्वारा नैतिक एवं सद्गुणी जीवन है। यह कर्म उसी गुरमुख को प्राप्त होता है जिन पर अकाल पुरख की कृपा दृष्टि होती है–**घड़ीऐ सबदु सची टकसाल।। जिन कउ नदरि करमु तिन कार। नानक नदरी नदरि निहाल।।** इस यात्रा दौरान नाम–सिमरन का आश्रय लेकर कृष्णभावनामृत कर्म करने वाला साधक अपने इहलौकिक दायित्वों का निष्काम भाव से पालन करता हुआ अपने जीवन के अंतिम गंतव्य मोक्ष को प्राप्त करता है। प्रतिक्षण उस ऊँकार स्वरूप अकाल पुरख का जाप करते रहने से, उसकी महिमा उसके नाम के श्रवण मात्र से भी भौतिक एवं आध्यात्मिक पक्ष दृढ़ प्राणी के लिए कुछ भी कृत्य नहीं रह जाता उसके प्रत्येक कार्य में अकर्म का भाव निहित हो जाता है। कर्त्तापन के भाव से निर्लिप्त प्राणी जीवन के सभी संशयों से मुक्त हो जाता है। वह परमेश्वर जो निरवैर है, निर्भय है के साथ अपने अंश रूपी स्वरूप को उसे बोध हो जाता है, आत्मसाक्षात्कार हो जाता है कि इस पृथ्वी पर उसके जन्म का प्रयोजन एवं लक्ष्य क्या है और वह निरन्तर इन दो प्रश्नों की सिद्धि हेतु कर्मरूपी साधना करता है और अंततः परमधाम जो पवित्र है, सत्य है, उस सच्च खण्ड में प्रवेश कर जन्म–मरण के बन्धन से मुक्त हो जाता है, उसका आवागमन का चक्र खंडित हो जाता है अर्थात् इस परमधाम में प्रवेश करने के बाद कोई भी वापस नहीं आता–**यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम।।**

स्पष्ट है कि ईश्वर के प्रति समर्पित भाव, उसके हुक्म में प्रसन्न रहने वाला मानव ही गुरमुख, संन्यासी एवं योगी कहलाता है, क्योंकि उसका प्रत्येक कर्म स्वयं के लिए न होकर सृष्टि के कल्याण के लिए होता है। सच्चे पातशाह गुरू नानक देव जी कहते हैं कि व्यक्ति अपने कर्मों के अनुसार ही परमेश्वर का सामीप्य प्राप्त करता है या उससे दूर रहता है, उसकी भक्ति नहीं कर पाता। जिन्होंने प्रभु का नाम–सिमरन किया है, उनके जप–तप सफल हुए है। ऐसे सद्प्राणियों के मुख उज्ज्वल हुए हैं और कितने ही जीवन नाम–सिमरन करके आवागमन के चक्र से मुक्त हो गए हैं–**करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि।। जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि।। नानक ते मुख उजले केती छूटी नालि।।** नाम–सिमरन एवं भक्ति द्वारा जब मानव ईश्वर के कर्मों की दिव्य प्रकृति को जान लेता है वह शरीर को त्याग कर पुनः संसार में जन्म नहीं लेता और ईश्वर में मिल कर ईश्वरीय रूप हो जाता है–**त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन।।**

सन्दर्भ

1) न्यायदर्शन के 4.1.62 सूत्र पर न्याय भाष्य, पृ. 36
2) हरिभाऊ उपाध्याय, भागवत धर्म, सस्ता साहित्य मंडल, 1962, पृ. 9
3) यजुर्वेद, 40.15
4) वही, 40.18
5) आप्टे, वामन शिवराम, संस्कृत–हिन्दी–कोश, पृ. 791
6) वही, पृ. 275
7) सिन्हा, हरेन्द्र प्रसाद, धर्म दर्शन की रूपरेखा, पृ. 16
8) ऋग्वेद, 1.156.3
9) कल्याण, मानवता अंक, पृ. 41
10) यजुर्वेद, 3.47

सन्दर्भ ग्रन्थ

- श्रीमद्भगवदगीता
- जपुजी साहिब, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब